भूमि अधिग्रहण – एक ज्वलन्त समस्या

पंकज कुमार गर्ग
वैज्ञानिक-बी, राजसं;, रूड़की

आखिर इतनी तेजी के साथ भू–अधिग्रहण क्यों और किसके लिये किया जा रहा है? वह भी एक ऐसे देश में जहाँ 70% प्रतिशत आबादी खेती पर निर्भर है। लगता है देश के विकास के लिये देशी अवधारणा वैश्वीकरण की आँधी उड़ चुकी है और विश्व पूँजी की हवस को विकास का नाम दे दिया गया है। सरकार कोई भी हो, भू–कानूनों में परिवर्तन कर, कारपोरेट जगत के लिये किसानों की भूमि हड़पने को आसान बना रहीं है। सन् 2002 में सरकार ने कानून बदला कि कोई भी विदेशी कम्पनी भारत में खेती की जमीन खरीदकर अथवा ठेके पर खेती नहीं करा सकती। वर्तमान सरकार सदन में नया विधेयक लाने की तैयारी कर रही है।

यह कैसा विकास लगता है कि बहुराष्ट्रीय कम्पनियाँ, इजारेदार मीडिया एवं समूचे तन्त्र ने मिलकर विकास की अवधारणा का अपहरण कर लिया है। हाइटैक्ट माडल सिटी, गोल्फकोर्स, नाइट सफारी, कैसिनो, माल एवं मल्टीप्लैक्स आदि विकास के प्रतीक बना दिये गये हैं। भारत जैसे गरीब देश में केवल 10 प्रतिशत लोग ही इन सुविधाओं का लाभ उठा सकते हैं। अब केवल इतने लोगों के लिये किसानों की उपजाऊ भूमि का अधिग्रहण देश को कैसे विकास की ओर ले जायेगा? भारत के बाकी एक अरब लोगों के पेट भरने के संसाधन को नष्ट किये जा रहे विकास का देश हित में क्या मतलब?

अठारहवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में इंग्लैण्ड में औद्योगिक क्रान्ति शुरू हुई और इसी के साथ ब्रिटिश भारत में भी औद्योगिकीकरण और नगरीकरण की प्रक्रिया ने जोर पकड़ा। इसी के अर्न्तगत अंग्रेजों ने भारत के लिये पहला भूमि अधिग्रहण कानून 1894 बनाया। इस अधिनियम को एच0डब्ल्यू0ब्लीस ने प्रस्तुत किया। लगभग 100 वर्ष बाद 1984 में इस कानून में संशोधन किया गया। लेकिन यह कानून आज भी अपने बुनियादी स्वरूप में जनपक्षीय न होकर औद्योगिक घरानों तथा निगमों का हित साधक है ।

भूमण्डलीय और जनसंख्या विस्फोट भूमि अधिग्रहण मुददे को ज्यादा संवेदनशील बना रहा है। यू.पी.ए. सरकार की प्रथम पारी में गठित राष्ट्रीय सलाहकार परिषद ने भूमि अधिग्रहण से सम्बन्धित नये विधेयक का मसौदा तैयार किया था। लेकिन यह अभी तक पारित नहीं हो सका, जो यह दर्शाता है कि किसान सरकार के एजेन्डे में किस पायदान पर खड़े हैं ।

हाल के दिनों में पं.बंगाल, उड़ीसा, आन्ध्र प्रदेश व उत्तर प्रदेश में भूमि-अधिग्रहण के मसले को लेकर किसानों के उग्र एवं हिंसक प्रदर्शन ने इसे अति संवेदनशील बना दिया है। 2006-07 के राष्ट्रीय सलाहकार परिषद के प्रस्तावित मसौदे को लेकर राजनीति पार्टी और किसान नेता में सहमति नहीं है। भूमि-अधिग्रहण पुर्नवास और मुआवजे से सम्बन्धित जनपक्षीय एक मत नहीं है।

विकास कार्य के लिये भूमि अधिग्रहण को लेकर देश जल रहा है। भूमि अधिग्रहण का मूल सिद्धान्त है कि जनहित के लिये निजी हित को छोड़ना होगा। इसी दृष्टि पर चाणक्य ने राजा को सलाह दी थी कि **"व्यक्ति को परिवार के लिये, परिवार को गाँव के लिये तथा गाँव को देश के लिये त्याग देना चाहिये"** इसी सिद्धान्त के आधार पर किसी भी सार्वजनिक कार्य के लिये भूमि अधिग्रहण किया जा सकता है "सार्वजनिक"

कार्य क्या है? इसकी व्याख्या करने का अधिकार केवल सरकार को है अतः सरकार के दृष्टिकोण से, लाखों लोगों को अपनी भूमि से बेदखल करके एक बिल्डर को भूमि देना या किसी कल्याणकारी योजना, हाईवे, जल विद्युत परियोजना या स्टेडियम निर्माण आदि के लिये अधिग्रहण सार्वजनिक हित में हो न्यायालय भी इसमें दखल नहीं दे सकता एक दृष्टिकोण से उचित भी है सरकार यदि कानून का दुरूपयोग करेगी तो जनता मे आक्रोश फैलेगा और जन विरोध होगा। बंगाल– सिंगुर, नंदीग्राम व यमुना एक्सप्रेस हाईवे व उड़ीसा की पास्को फैक्ट्री इसका मुख्य उदाहरण है।

डा. एन.सी. सक्सेना, सदस्य राष्ट्रीय सलाहकार परिषद के अनुसार– 1894 का भूमि अधिग्रहण कानून एक औपनिवेशक कानून है, इसे आम जनता के वैध अधिकारों की रक्षा के स्थान पर प्रभुत्व यानि समूहों के हितों की रक्षा के लिये बनाया गया था आज इसमें भारी बदलाव की आवश्यकता है।

आज की परिस्थिति को देखते हुए भूमि अधिग्रहण व पुनर्वास कानून होना चाहिये जिसके अन्तर्गत "भूमि तब तक कब्जे में नहीं ली जा सकती, जब तक भूमि अधिग्रहण की प्रक्रिया के अन्तर्गत प्रभावित मनुष्य का पुनर्वास न हो जाये"। प्रभावित मनुष्य को भी सही ढंग से परिभाषित करने की जरूरत है। प्रभावित वे होते हैं जो या तो विस्थापित हो जाते हैं या अपनी सम्पदा या आय का 50% या उससे अधिक गवां बैठते हैं। हमारे देश में पुनर्वास की परिभाषा को विचित्र ढंग से परिभाषित किया जाता है। "वास्तविक पुनर्वास वह है जहाँ प्रभावित लोग अपनी पुरानी आय से ज्यादा प्राप्त कर पायें और गरीबी रेखा से काफी ऊपर जीवन बसर करें हमें न्यूनतम विस्थापन की भूमि अधिग्रहण की बुनियादी शर्त बनानी होगी। भूमि अधिग्रहण के किसी भी ठोस व सामाजिक कानून में सभी परियोजनाओं के कारण प्रभावित होने वाले आदिवासियों और खेतीहर परिवार को जमीन के बदले जमीन देने का प्रावधान होना चाहिये।

हमारे यहाँ कृषि भूमि अधिग्रहण की स्थिति में मुआवजे की व्यवस्था भी काफी शिथिल है, हमें अधिग्रहित की गयी सम्पदाओं के लिये हर्जाना नहीं, अपितु क्षतिग्रस्त हुई आजीविकाओं के नुकसान की भरपाई भी करनी होगी। भूमिहीन मजदूर, सरकारी जमीन पर कब्जा कर जीवन यापन करने वाले लोग, कारीगर जैसे सभी सम्पदाहीन लोगों को भी पुनर्वास का हकदार मानकर या तो जमीन देने या कम से कम दो साल तक सम्मानजनक न्यूनतम मजदूरी देने की जरूरत है। हमें मार्केट वैल्यू की दुहाई देने के स्थान पर **'रिप्लेसमेंट वैल्यू'** के सिद्धान्त की ओर बढ़ने की जरूरत है।

आज भूमि अधिग्रहण की प्रक्रिया में शासन–प्रशासन की संस्थाओं को भी चुस्त–दुरूस्त करने की आवश्यकता है हमारे कलस्टर प्रोजेक्टों को चलाने जा रहे कम्पनियों के मालिकों और उनके राजनीतिक संरक्षकों के इशारे पर चलने के बजाय पंचायती राज संस्थाओं और गैर-सरकारी संगठनों से विचार विमर्श करें और यह सुनिश्चित करें कि अमुक परियोजना के लिये वास्तव में कितनी भूमि की आवश्यकता है। आज नीतियों और कानून में सब बदलाव के साथ-साथ यह भी जरूरी है कि क्रियान्वयन एजेन्सी व उनके सूत्रधारों की सोच में बदलाव आये, इस मामले में, जिला राज्य व केन्द्र के स्तरों पर 'इम्पलीमेण्टेशन एण्ड मॉनिटरिंग बोर्ड' बनाने की आवश्यकता है।

भूमि अधिग्रहण (संशोधन) विधेयक 2007

यह विधेयक 1894 के भूमि अधिग्रहण अधिनियम में व्यापक संशोधन प्रस्तावित करता है :-

- यह विधेयक सार्वजनिक उद्देश्य को पुन: परिभाषित करते हुये कहता है कि आम जन के लिये किसी भी परियोजना अथवा सामाजिक महत्व तथा आधारभूत ढॉचा विकास के कार्य के लिये भूमि का अधिग्रहण किया जा सकता है।
- कोई एक व्यक्ति, सार्वजनिक उद्देश्य से कोई योजना शुरू करने हेतु उप क्षेत्र में 70% भू भाग खरीद लिया हो या प्राप्त कर ली है, तब उसके लिये सरकार 30% भूमि अधिग्रहण करेगी। यहाँ व्यक्ति का तात्पर्य व्यक्तियों का समूह, संगठन, ढांचा, निकाय और कम्पनी है ।
- समाजिक महत्व के दायरे में सैन्य व प्रतिरक्षा से जुड़ी परियोजनाओं और आधारभूत ढांचों के विकास में बिजली आपूर्ति, सड़क, रेल, हाईवे, पुल, व हवाई अड्डा के निर्माण, जल व्यवस्था, साफ-सफाई व स्वच्छता तथा अन्य अधिसूचित सुविधाएं शामिल हैं ।
- मैदानी क्षेत्र में भूमि अधिग्रहण 400 परिवारों और पर्वतीय क्षेत्र व आदिवासी क्षेत्र में 200 परिवार विस्थापित होते हैं तो सरकार सोशल इम्पैक्ट एसेसमेन्ट करायेगी और आदिवासी, वनवासी और काश्तकारी अधिकार रखने वाले लोगों समेत विस्थापित व्यक्तियों को हर्जाना व पुनर्वास के हकदार होंगे।
- अधिग्रहण की लागत में भूमि गंवा देने या उससे होने वाली क्षति के लिए भुगतान और विस्थापित जनों के पुनर्वास से जुड़ी सभी लागते शामिल होंगी।
- भू-अधिग्रहण का आकस्मिक अनिवार्यता के कारण है तब हर्जाने अथवा मुआवजे के लिए विशेष प्रावधान होंगे जबकि आकस्मिक अनिवार्यता को परिभाषित नहीं किया गया।
- सिविल कोर्ट के पास भूमि-अधिग्रहण के मामले में दखल देने का अधिकार नहीं होगा।
- केन्द्र व राज्य स्तरों पर भूमि-अधिग्रहण क्षतिपूर्ति विवाद निपटान प्राधिकरण की स्थापना होगी क्योंकि ऐसे प्राधिकरण न्यायिक निकायों के समकक्ष होंगे, मगर जरूरी नहीं कि इनमें केवल विधिक योग्यताओं व अनुभव रखने वाले व्यक्तियों को सम्मिलित किया जायेगा।
- अधिग्रहण क्षेत्र की भूमि को फिर से बेचने की स्थिति में मूल अधिग्रहण कैपीटल गेन, केपीटल गेज की मूलराशि का 80 प्रतिशत मूल राशि, मालिकों अथवा उनके वासियों के बीच वितरित करनी पड़ेगी। हालांकि अधिग्रहीत भूमि का हस्तान्तरण केवल सार्वजनिक उद्देश्य के लिये ही हो सकता है और इसके लिए सरकार से अनुमति लेनी होगी।
- यदि अधिग्रहण के बाद भूमि 5 साल तक उपयोग में नहीं लायी जाती है तो उसे समूल सरकार के सुपुर्द कर देना होगा ।

1996 में विश्व बैंक के तत्कालीन उपाध्यक्ष और अन्तर्राष्ट्रीय कृषि अनुसंधान सलाहकर समूह के अध्यक्ष डॉ. इस्माइल सेरेगिल्डन ने एक बयान जारी किया कि विश्व बैंक का आंकलन है कि अगले 20 वर्षों में भारत में ग्रामीण क्षेत्रों से शहरी क्षेत्रों में विस्थापन की संख्या फ्रांस, ब्रिटेन और जर्मनी की कुल आबादी के दुगने से भी अधिक हो जायेगी। फ्रांस, ब्रिटेन, रूस, जर्मनी की आबादी 20 करोड़ है। इस प्रकार विश्व बैंक का मानना है कि 2015 तक भारत के 40 करोड़ लोग गॉव से शहर में चले जाएंगे। ग्रामीण भारत से 40 करोड लोगों के सम्भावित पलायन से भारत अब तक विश्व में हुए विस्थापन का साक्षी बन जाएगा। यह अवधारणा केवल भारत में ही सीमित नहीं रहेगी बल्कि एक बड़ा क्षेत्र इसकी चपेट में आ जाएगा। जिन करोडों लोगों को विस्थापन के लिए मजबूर किया जा रहा है उन्हें कृषि शरणार्थी कहा जा सकता है।

2008 में जारी विश्व बैंक विकास रिपोर्ट में विश्व बैंक ने स्पष्ट रूप से उल्लेख किया है कि भारत की भूमि पर किरायेदारी शुरू होनी चाहिए, इसके अनुसार भूमि बहुत ही महत्वपूर्ण संसाधन है, किन्तु दुर्भाग्यवश यह ऐसे लोगों (किसान) के हाथ केन्द्रित है जो इसका उपयोग कुशलता पूर्वक नहीं करते। विश्व बैंक का मानना था कि इन लोगों को संसाधनों से वंचित कर भूमि उन लोगों को सौंप देनी चाहिए जो इसका कुशलता से अधिक उपयोग कर सकें। ऐसे में केवल कारपोरेटिव क्षेत्र ही आते हैं।

मुआवजे का जापानी मॉडल

जापान में भूमि-अधिग्रहण कानून बहुत सख्त होने के कारण सार्वजनिक कार्य के लिए भी भूमि की अधिकतर खरीद आपसी समझौतों के आधार पर होती है। आवश्यकता पड़ने पर परियोजना के स्वरूप में बदलाव कर दिया जाता है। सत्तर के दशक में नरीता एयरपोर्ट के लिये भूमि का अधिग्रहण किया गया था अधिग्रहण का भारी विरोध हुआ था। इस विरोध के कारण प्रोजेक्ट 7 वर्ष बाद शुरू हुआ। इसके बाद एयरपोर्ट के विस्तार का प्रश्न उठा परन्तु कानून इतना स्पष्ट था कि पुनः कोई विरोध नहीं हुआ कारण यह कि मुख्य विषम परियोजना के लाभ का वितरण है।

जापान में भूमि-अधिग्रहण के समय अनेक प्रकार के मुआवजे देने का प्रावधान है, उतनी ही भूमि दूसरे स्थान पर खरीदने के लिए पर्याप्त धन दिया जाता है। खेती व व्यापार को स्थानान्तरित करने में हुए खर्च की अदायगी की जाती है। इस दौरान कमाये जाने वाले लाभ की क्षति तथा कर्मचारी को दिया जाने वाले वेतन का भुगतान किया जाता है। भूमि के मूल्य में भविष्य में होने वाली वृद्धि के अंश का भी भुगतान किया जाता है। सार्वजनिक परियोजना के कारण भूमि के मूल्य में होने वाली वृद्धि का भुगतान होता है। नये परिसर में बुनियादी सुविधाओं जैसे खेती व्यापार जमाने के लिये धन दिया जाता है।

विशेष आर्थिक क्षेत्र (एस.ई.जेड.)

23 जून, 2005 को संसद ने विशेष आर्थिक क्षेत्र (स्पेशल इकनामी जोन) को विधेयक पारित कर कानून बना दिया था। इसके सितम्बर, 2006 तक कुल 267 एस.ई.जेड. को मंजूर कर लिया गया, जिसमें 150 को औपचारिक और 117 को सैद्धान्तिक तौर पर स्वीकृत कर लिया था। आजादी के बाद भारत में औद्योगिक विस्तार का यह सबसे बड़ा प्रभाव था। भारत में एस.ई.जेड. की अवधारणा को बढाने की सभी वजह मौजूद हैं। सकल घरेलू उत्पादक में निर्माण क्षेत्र का मात्र 17 प्रतिशत योगदान है और जब तक भारत निर्माण क्षेत्र प्रतिस्पर्धात्मक नहीं होगा, तब तक नया निवेश सम्भव नहीं होगा। जिसकी कमी से रोजगार सृजन अधर में लटका रहेगा। युवाओं की बढ़ती आबादी और 4 करोड़ से भी अधिक बेरोजगारों हेतु रोजगार के अवसर बनाने के लिए भारत को ग्रामीण अर्थव्यवस्था से औद्योगिक अर्थव्यवस्था की ओर बढ़ना ही होगा। निर्माण क्षेत्र कृषि पर निर्भर 56 प्रतिशत लोगों को आकर्षित कर सकता है। इसलिए एस.ई.जेड. को बढ़ावा देने में कोई बुराई नहीं है।

विकास के इस क्रम में, हमारे पास चीन जैसी सड़के हों, हमारे एयरपोर्ट भी किसी से कम न हो और प्रतिवर्ष अतिरिक्त विद्युत भी पैदा करें जो चीन कर रहा है। इन्फ्रास्ट्रक्चर सुधारने के लिए जितना करना पड़े वो सब किया जाए। यह इसलिए भी जरूरी है कि सन् 2050 तक दुनिया का तीसरा सम्पन्न देश बनता है। इस दौड़ में हमारे पीछे रहने का रहस्य इन्फ्रास्ट्रक्चर की कमी है। बिजली की कमी से प्रतिवर्ष करोडों का नुकसान होता है। खराब रोड़ की वजह से 20,000 करोड़ की हानि होती है।

एस.ई.जेड. के लाभ

- उद्योगों में हड़ताल की कोई गुजांइश नहीं होती
- बिजली व पानी की पूर्ण सुविधा
- मुख्य मार्ग से जोड़ने वाली सड़कें
- हैलीपैड व हवाई अड्डों का निर्माण
- रहने वाले लोगों के लिए बुनियादी सुविधा
- उच्च स्तर की – माल, मल्टीप्लैक्स, स्टेडियम, गोल्फ मैदान, स्कूल व अन्य सुविधा
- सभी तरह की आय पर 10 साल तक छूट
- क्षेत्र में लगने वाली सभी वस्तुओं पर एक बार सीमा शुल्क, केन्द्रीय उत्पाद शुल्क, सेवा कर, बिक्री कर व स्थानीय कर माफ
- क्षेत्र में प्रयोग होने वाले कच्चे माल को सीमा शुल्क और उत्पादक शुल्क से मुक्त

एस.ई.जेड. की हानि

- वित्त मंत्री के अनुसार 2010 तक देश को लगभग 17500 करोड रूपये का राजस्व का नुकसान होगा।
- चूंकि औद्योगिक गतिविधियाँ केवल 35 प्रतिशत ही भूमि पर निर्मित होती हैं इसलिए इसे भू-सम्पत्ति के घोटाले की आशंका होती है।
- उपजाऊ भूमि का ह्रास व किसान व अन्य कामगारों को मुसीबतों का सामना करना पड़ता है ।

पास्को एक बहुराष्ट्रीय कम्पनी है। पोहांग आयरन एण्ड स्टील कम्पनी, कोरिया की जानी-मानी कम्पनी है। इसके 50 हजार करोड़ रूपये से अधिक निवेश से उड़ीसा में विशाल इस्पात परियोजना लम्बे समय से विवादों एवं जन विरोध के बीच फंसी पड़ी है। यह परियोजना उड़ीसा के जगत सिंह पुर में समुद्र तट के पास प्रस्तावित है। यह परियोजना भारत में सार्वजिनक क्षेत्र की अनेक जानी-मानी परियोजनाओं की कुल उत्पादन क्षमता से भी अधिक है। 120 टन वार्षिक इस्पात का उत्पादन करने वाली इस परियोजना के लिये लोहे का अयस्क प्राप्त करने में ही हजारों करोड़ रूपये खर्च हो जायेंगे। एक ऐसे समय में जब अन्तर्राष्ट्रीय अयस्क की कीमत बढ़ रही है सस्ते लोहे के अयस्क की भारत में उपलब्धि के कारण इस परियोजना का मुनाफा पहले से बढ़ गया है। एक ही स्थान पर भारी मात्रा में लोहे का अयस्क जमा कर देने का अर्थ यह होगा कि वहाँ पर्यावरण पर भारी दबाव पड़ेगा, खेती, वन, पशुपालन आदि पर आधारित टिकाऊ आजीविकाओं पर प्रतिकूल प्रभाव पडेगा।

भूमि-अधिग्रहण के क्षेत्र में मुआवजा देने व मानवीय आधार पर किसानों को राहत पहुंचाने वाला कानून होना चाहिए। वर्तमान सरकारें गरीब लोगों को बेदखल करके अमीरों को लाभ पहुंचा रही हैं। सरकार को इसे नियंत्रित करने के लिए भूमि-अधिग्रहण कानून को सुदृढ़ करना चाहिए ताकि इसका दुरूपयोग न हो।

- विकास कार्यो के लिए भूमि की खरीद मुख्यतः बाजार के माध्यम से ही की जानी चाहिए।
- परियोजना यदि वास्तव में लाभकारी हो तो लाभ का एक अंश भूमि विक्रेता को भी मिलना चाहिए, तो विवाद समाप्त हो जाएगा ।
- मूल विषय अधिग्रहीत भूमि की कीमत तय करने का है।

- भूमि अधिग्रहण कानून सख्त एवं पारदर्शी हो।
- स्पेशल इकोनॉमिक जोन तथा जल विद्युत परियोजनाओं के वाणिज्यिक प्रोजेक्ट के लिए भूमि तभी अधिग्रहीत हो जब उस क्षेत्र के 90 प्रतिशत लोगों ने अपनी इच्छा से भूमि दे दी हो।

विश्व किस दिशा में जा रहा है? क्या हम अनुमान लगा सकते हैं कि भयानक रफ्तार से विस्थापन के कारण कितने गम्भीर, सामाजिक–आर्थिक और राजनैतिक संकट खड़े हो सकते हैं? इसके बदले हमें कहा जा रहा है कि बढ़ता शहरीकरण और आर्थिक संवृद्धि का अपरिहार्य परिणाम है कि वैश्वीकरण ने राष्ट्रीय सीमाओं का अन्त कर दिया है। यह सुनने में अच्छा लगता है परन्तु आने वाले समय में राष्ट्रों की सीमाएं धुंधली होने के स्थान पर गहरी व लम्बी हो जाएंगी।

विकासशील देशों में जिस रफ्तार से और जिस हद तक भूमि-हड़पने का सिलसिला चल रहा है, यह चिन्ता का विषय है। उदाहरण के लिये एक भारतीय कम्पनी ने अफ्रीका और लेटिन अमेरिका में तीन हजार वर्ग किमी. भूमि हासिल कर ली है, यह क्षेत्र बहुत से छोटे देशों के क्षेत्रफल से अधिक है। एक दिन इस भूमि का मालिक झण्डा फहराकर यह घोषणा कर सकता है कि यह एक स्वतंत्र राष्ट्र है।

हम इस सम्भावना को खारिज नहीं कर सकते हैं किन्तु हमें अधिक सावधानी से काम लेना होगा। देर-सवेर, समाज, कृषि, खाद्य सुरक्षा और भूमि संसाधन की सच्चाई से रूबरू होगा। जितनी जल्दी यह होगा उतना ही बेहतर होगा।

*****

यदि भारतीय लोग कला, संस्कृति और राजनीति में रहना चाहते हैं तो इसका माध्यम हिन्दी ही हो सकती है।

-चक्रवर्ती राजगोपालाचार्य